प्रथम अध्याय

:- इलाचन्द्र जोशी जी का जीवन वृतान्त -:

001

इलाचन्द्र जोशी जी का जीवन वृत्तान्त --

उत्तर प्रदेश में नैनिताल के पास हिमालय के पहाडी प्रदेश के गोद में `अल्मोडा` नामक गाँव हैं । जहाँ की प्रकृति आकर्षक, मनोरम और हरितिमा से परिपूर्ण हैं । इस भूमिकी विशेषाता यह हैं कि अगर कोई संतप्त आदमी इस भूमिपर अपना पैर रख लेता हैं तो उसका दुःखीन मन भी शांत हो जाता हैं, ऐसी पवित्र भूमि में जन्म लेनेवाला व्यक्ति भावुकता, सहृदयता और संवेदनशीलता आदि विशेषाताओं के साथ जन्म लेता हैं । ऐसी पवित्र भूमि में अनेको कवि, साहित्यकार,कलाकार और उपन्यासकारों ने जन्म लेकर इस दुनिया में यश की प्राप्ति की । इन साहित्यकारों में इलाचन्द्र जोशी जी का नाम भी लिया जाता हैं, जिनका जन्म मार्गशीर्षा मास के शुक्ल पक्ष में त्रयोदशी की शुभ तिथि को संवत् १९५६ तदानुसार १३ दिसम्बर १९०२ को अल्मोडा के एक सुसंस्कृत, सुरुचिपूर्ण, कलासम्पन्न कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ ।

इलाचन्द्र जी के पिता पंडित `चन्द्रवल्लभ` जोशी वन-विभाग में चीफ कन्जर्वेटर आफ फारेस्टर के निजी सचिव एवं एक प्रसिध्द संगीतज्ञ थे । कुशल शिल्पी एवं मूर्तिकार भी थे । इलाचन्द्र जी की माता `लीलावती` अधिक पढी लिखी नहीं थी, फिर भी सुसंस्कृत थी । गीताका अध्ययन वह नियमीत रुपसे करती थी । उनके बडे भाई हेमचन्द्र `जोशी एक बडे भाषा-शास्त्री विद्वान थे ।

जोशी जी अपने माता-पिता के सब से छोटे पुत्र होने के कारण सभी के लाड और प्यार के भाजन बने रहें । जब वे पाँच बरस के हुये तब पिताजी ने उनकी शिक्षा का श्रीगणेश किया और अल्मोडा के पाठशाला में भेज दिया । धीरे - धीरे वे शिक्षा में रुचि लेने लगे । इनके परिवार में संस्कृत बडी श्रध्दा से पढी जाती थी, अत: आप को संस्कृत भाषा का ज्ञान होने लगा ।

0.2

प्राथमिक शिक्षा लेते हुये जब आप सातवीं कक्षा तक पहुँचे तब आप की उम्र १३ साल की थी । इतनी छोटी उम्र में आपने अपनी प्रतिभा की झलक दिखाई । स्वयं सुधार नाम की एक हस्तलिखित पत्रिका निकाली । इस पत्रि का में ख्यातनाम नाटककार गोविंदवल्लभपंत की रचनाएँ प्रकाशित करवाई । जिस स्कूल में आप पढते थे, उसी स्कूल में सुमित्रानंदन पंत भी अगली कक्षा में पढते थे उन से भी आप प्रभावित हो चुके थे ।

जब आप हाईस्कूल जाने लगे तब हिंदी और अंगरेजी भाषा का साहित्य पढने लगे । घर में ही पिताजी का निजी पुस्तकालय था । जिस में देशी, विदेशी, साहित्य की बहुत-सी श्रेष्ठ पुस्तकें उपलब्ध थी । इस का लाभ उठाने लगे । परिणाम स्वरूप संस्कृत, हिंदी, अंग्रेजी इन तीनों साहित्योंसे विशेष लगाव हो गया और इन तीनों में आपने अधिकारिक ज्ञान प्राप्त किया ।

आप पर पिताजी और बडे भाई का बडा प्रभाव था । इसके साथ साथ हाईस्कूल जीवन में ही अन्य साहित्यकारों से आप प्रभावित होते रहें । आप विद्यार्थी जीवन में ही हिंदी के अमर कथाकार प्रेमचंद जी से प्रभावित हो चुके थे । जब प्रेमचंद जी की कहानियाँ सरस्वती में निकलती थी, आप ढूँढ-ढूँढ कर पढते थे । प्रेमचंद जी के नवनिधि कहानी संग्रह को बारह बार पढा था, इसके साथ ही साथ प्रसाद जी की कविताओं ने भी आपको मोह लिया था । इसके कारण आप इंदु पत्रिका नियमीत रूप से पढने लगे । बंगला साहित्य से विशेषकर रविन्द्रनाथ टागोर से आप को बडी प्रेरणा मिली । पाश्चात्य साहित्यकारों की ओर भी आपकी बहुत रुचि थी । अंग्रेजी उपन्यासकारों में डी.एस.लारेन्स, अलबर्ट काम, रिचर्डसन, गारसियोनित्से, सात्र आदि विद्वानों के साहित्य का आपने रुचि के साथ अध्ययन किया । पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक सिगमण्ड फ्रायड, युंग, एडलर से आप प्रभावित हुये ।

आप की शिक्षा मैट्रीक तक ही हुई । उच्चशिक्षा के लिए आप किसी कॉलेज में दाखिल नहीं हुये, क्योंकि कोर्स की अध्ययन की अपेक्षा साहित्यिक अध्ययन

में आप अधिक रुचि लेते थे । आप अल्मोडा से कलकत्ता भाग गये ,तब आप की आयु केवल उन्नीस साल की थी ।

कलकत्ता में उनका किसी से परिचय नहीं था । अपरिचित महानगरी कलकत्ता में वे घूमने लगे । वहाँ लाइब्ररी में पढते,साहित्यिक चर्चाओं की जगह जाते । इसी चक्कर में कुछ दिन बित गये । उनके सामने अपने उदरनिर्वाह की समस्या खडी हुई । पेट चलाने के लिए उन्होंने ` लाँड्री ` खोल दी । खुद धोबी का काम करने लगे । कपडे धोना, कपडों को प्रेस करना,हर कपडे को लिस्ट से मिलना,उनको अलग अलग करना,बाँधना,किसका कितना कपडा है, इन सब की गिनती करना,यह सब काम स्वयं करते थे । धंदे की इमानदारी देखकर उनके ` लाँड्री ` पर लोगों की कापनी भीड होने लगी । लोगों से परिचय बढता गया । इस का उल्टा परिणाम उनको भुगतना पडा । उनकी बहुत-सी उधारी लोगों के पास रहने लगी । पैसे कमाने के लिए उन्होंने एक मासिक पत्र ` विश्वमित्र ` नाम से निकाला । इस से उनकी प्रसिध्दि होने लगी । लाँड्री में काम करना पडता था , इसलिए दिन में लिखने या पढने के लिए उन्हें समय नहीं मिलता था । रात में लाँड्री में सोने के लिए जगह भी नहीं थी, गर्मी भी थी और पास ही बाहर गंदी गली थी, जगह कम थी इसलिए जो धुलने के लिए कपडे आते थे, उन्ही गट्ठरों के ऊपर सोते थे । कुछ कपडों में बच्चों का टट्टी भी होता था, ऐसे बिस्तरपर सोने के बाद उनको हिमालय की याद आती थी । वहाँ का सौंदर्य, बहनेवाले झरने, आँखों के सामने दिखाई देते थे । इन बातों को सोच सोचकर कविता याद आती थी । ऐसी प्रतिकुल अवस्था में उन्होंने हिमालय पर कविताएँ की । ये ही कवितायें, विजनवती` में छपवा दी । तब से कवि के रुप में आप लोगों में मशहूर हुये । साहित्य में आप का आगमन हुआ । आप की कविताएँ राजकुमार,दमयन्ती,महाश्वेता, शकुंतला,नरक निर्वासी,मायावती आदि हैं ।

कलकत्ता में एक दिन उनकी भेंट बंगाल के श्रेष्ठ उपन्यासकार शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय से हुई । उस दिन के बाद वे उन को प्रति दिन मिलते रहें । परिचय मित्रता में परिणत हो गया । घनिष्ठता बढती गयी । साहित्यिक विषयों पर

वाद-विवाद होने लगा । शरत्बाबू के साहित्यिक विचारों का प्रभाव उन पर होने लगा । शरत्बाबू भी बडे सहृदयी थे । उन्होंने उनके हृदय की परख की, दबे हुओ साहित्यिक कला को प्रेरणा दी । उनकी प्रेरणासे ही आप कहानी और कथा साहित्य लिखने लगे ।

इलाचन्द्र जी को कलकत्ता में यथार्थ जीवन के कटु अनुभव प्राप्त हुए । एक ओर लाखोंजनों का ठाठें मारता हुआ जन-समुदाय और उसका व्यस्त जीवन, जहाँ सभी प्रात: काल से उठकर संध्या तक जीविका जुटाने की धुन में एक दुसरे से सटे हुए होने पर भी मन से पूर्णतया दूर बढते हैं, चलते हैं, इस पर इलाचन्द्र जी सोचने लगे, जीवन क्या हैं ? व्यक्ति क्या हैं ? संसार क्या हैं ? प्रकृति क्या हैं ? नारी क्या हैं ? कलकत्ता ने ही इलाचन्द्र जी को जीवन के जीवन रूपों का साक्षात्कार कराया हैं । उसी के जन-जीवन को विविध रूपों में दिखलाया हैं ।

निरंतर कटु और कठोर यथार्थ से संघर्ष होते रहने से उनका मन मनोवैज्ञानिक कहानियों की ओर झुक गया । उन्होंने लगभग १०० के आसपास कहानियाँ लिखी हैं । जो `रोमांटिक छाया`, `डायरी के नीरस पृष्ठ`, `होली और दीवाली`, `आहुति`, `खंडहर की आत्माएँ`, `धुंधलता`, `कटिले फूल`, `लजिले कांटे`, संग्रहों में संकलित हैं । इन के अतिरिक्त `उपनिषदों की कथाएँ`, `महापुरुषों की प्रेम कथाएँ` नामक दो कथा संग्रह हैं । उनकी अधिकांश कहानियाँ आत्मचरित्र शैली में ही लिखि गयी हैं । सब में मनोविज्ञान का आधार और आग्रह हैं ।

सन १९२५ के लगभग आपने कथा साहित्य लिखना आरंभ कर दिया । सन १९२९-३० में `घृणामयी` नाम से पहला उपन्यास लिखा । इस उपन्यास की आलोचकारों ने तीव्र भर्त्सना की । परिणाम स्वरूप उसी को परिष्कृत करके `लज्जा` शीर्षक से उसे सन १९५० को प्रकाशित किया ।

सन १९३२ में बडे भाई हेमचन्द्र के साथ मिलकर आपने अधिक पत्रिका `विश्ववाणी` का प्रकाशन आरंभ किया । उन्हीं दिनों `संन्यासी` उपन्यास लिखना आरंभ किया ।

सन १९३६ तक वे कलकत्ता में रहें । उस के बाद अपने मित्र श्री `ज्ञानपाल` जी सेठिया के प्रेरणा से इलाहाबाद आ गए और तब से निरंतर (केवल छोटे - मोटे अवसरों को छोडकर जब कि आल इंडिया रेडियों से कार्यरत थे) इलाहाबाद में ही रहें ।

सन १९४० में `संन्यासी` पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया । मनोविज्ञान की यह उनकी सर्वोत्तम रचना हैं । संन्यासी के प्रकाशन के साथ - साथ आप साहित्य गगन में चाँद सम चमकने लगे । इसके बाद उन्होंने `पर्देकी रानी`(१९४१), `प्रेत और छाया` (१९४६),`निर्वासित` (१९४६),`मुक्तिपथ` (१९५०), `सुबह के भूले` (१९५२),`जिप्सी` (१९५२) ।

`जिप्सी` उपन्यास तक पहुँच-ते-पहुँचते आपकी धारणायें और मान्यताएँ पूर्ण रूपेन बदल चुकी थी, आप व्यक्तिगत चेतना के स्थानपर सामुहिक चेतना ओं की ओर विशेष रूपसे प्रवृत्त हो चुके थे । जिस के कारण आप की लोकप्रियता भी उत्तरोत्तर बढती जा रही थी । परिणाम स्वरूप सन १९५५ ई. में भारत सरकार ने २००० रु.का सर्व श्रेष्ठ कृतिकार के रूप में पारितोषिक प्रदान कर सम्मान किया ।

इस के साथ साथ सन १९५६ में सरकार ने आल इंडिया रेडियों में `प्रोडयूसर` के जगह पर नियुक्त करके उनके ऊपर नयी जिम्मेदारी डाली । बहुत दिनों तक आप `आल इंडिया रेडिओ` के `प्रोडयूसर` के रूप में कार्य करते रहें । आप की कार्यकुशलता से सभी लोग संतुष्ट थें । अधिकारी गण से श्रोता तक आप के नाम की प्रशंसा करते रहें ।

आप ने सन १९५६ में `जहाज का पंछी` उपन्यास प्रकाशित किया । उपन्यास लेखन के साथ - साथ आप निबंध रचना भी करते रहें । आपने पचासों निबंधों की रचना की हैं । `विवेचना विश्लेषाण`,`साहित्यिक चिंतन सर्जना`, `देखा-परखा` आदि निबंध संग्रहों में संकलित हैं ।

आपने पत्रकारिता में विशेष ख्याति प्राप्त की थी । लखनऊ में प्रकाशित होनेवाले एक मासिक पत्र `सुधा` के आप सहायक संपादक भी रहें ।

006

कलकत्ता समाचार सम्मेलन पत्रिका, संगम और धर्मयुग के संपादक रूप में आप की सेवा सराहनीय है ।

साहित्य सृजन करते हुये आप को सन १९६८ में पक्षा-घात हुआ । इस बीमारी से आपका शरीर जर्जर बन गया, किंतु मन में उमंग, उत्साह था । सन १९७३ में `भूत का भविष्य` और `ऋतुचक्र` उपन्यास प्रकाशित किये । `उज्जयिनी की बातें` उपन्यास अप्रकाशित रहा ।

सन १९७७ में उत्तरप्रदेश सरकारने आप से १५००० रू. का पुरस्कार देकर सम्मानित किया । इस पुरस्कार के सम्मान में विष्णु प्रभाकर जी ने बधाई भी दी ।

आप का स्वभाव बाल सुलभ था, आप क्षणभर में बालकों के प्रति मोहित हो जाते थे । क्षणभर में डाँट भी देते थे और फिर गंभीर हो जाते थे । आप मित भाषी थे और अपनी बातों को युक्ति संगत बनाकर कहना अधिक पसंद करते थे । चिंतन के साथ साथ आप को मनन भी प्रिय था । सहृदयता आप में कूट कूटकर भरी थी । छलकपट का व्यवहार देना न तो आपको प्रिय था न वैसा पाना ही आप सहन कर पाते थे । परंतु द्रवणशील इतने थे कि आकस्मिक अपराधिको सहज ही क्षमा कर सकते थे ।

धूम्रपान के आप धुरंधर शौकीन थे, खमीरा मिश्रित सुगंध युक्त तम्बाकू का प्राय: इस्तेमाल करते थे । उपन्यासों की रचनाओं के समय सिगरेट को चेन-स्मोकर की भाँति मुँह पर लगाये रहेते थे ।

कूर्मांचल के शाक्त-ब्राह्मण होने कारण मांस, मछली का भोजन बंगाली ब्राह्मणों की तरह लेते थे । आप को कूर्मांचली विधिसे तैयार किये सूजी के पदार्थ बहुत पसंद आते थे । अपनी माताजी एवं पत्नी `हरिप्रिया` को बनाकर खिलाने का आग्रह किया करते थे । बथुवे का रायता आप को बहुत भाता था । आचार भी आप बहुत पसंद करते थे । भोजनोपरान्त मिष्ठान्न खाना अच्छा लगता था ।

भोजन के लिए कभी-कभी निराला जी, सुमित्रानंदन पंतजी, गंगाप्रसाद पांडेय जी और स्व. महादेवी वर्माजी को निमंत्रित करते थे । निराला जी कभी-कभी

स्वयं आपके साथ मिलकर खाना बनाते थे । बीच-बीच में साहित्यिक चर्चा चलती थी । पत्नी हरिप्रिया कुमाँचली व्यंजनों का रस बनाकर देती थी ।

आप को ताशों के खेल का बड़ा शौक था । दिवाली के दिनों में जमकर जुआ खेलते थे । आप के ताश के खेलों के मित्रों में पं. वाचस्पती पाठक, पं. केशवदेव शर्मा, श्री. एन. एन. मुखर्जी, डॉ. जगदीश गुप्त, केशवप्रसाद मिश्र आदि होते थें ।

आप के हर एक काम में आप की पत्नी हरिप्रिया सहायता करती थी । आप की बीमारी अवस्था में उसने आप की बहुत सेवा की । बीमारी के कारण आपका शरीर अत्यंत क्षीण बनता गया, आखिर १४ दिसम्बर ,१९८२ की सुबह की बेला आ गई, हिंदी जगत् के कवि, कहानीकार, निबंधकार, पत्रकार, उपन्यासकार इलाचन्द्रजी का अचानक देहावसान हो गया । आप ने ८० वर्ष पूर्ण कर ८१ वें वर्ष में चरण रखा ही था, कि आप अपनी धर्मपत्नी, तीन पुत्रों तथा एक पुत्री और अपने साहित्य प्रेमियों को रोते-बिलखते छोडकर चले गए ।

..